भूगोल लोगों के बारे में होता है

मनीष जैन

स्कूली जीवन में सूचना आधारित नीरस सामाजिक ज्ञान/विज्ञान ने हम में से बहुतों की जान ली है। यह विषय हमें समाज के बारे में पढ़ाने का दावा करता है पर सब कुछ हमारे अपने अनुभवों और जिंदगियों से बेहद दूर और अमूर्त लगता रहा है। इस प्रक्रिया में बजाय 'समाज' की जांच पड़ताल के, इस विषय ने खुद का ही एक असामाजिक चरित्र बना लिया। समाज से यह दूरी भूगोल के संदर्भ में और तीखी दिखती है। ऐसा मालूम पड़ता है कि नदियों, पहाड़ों आदि की जगह और नाम जानना ही भूगोल हो। ऐसे में यह सवाल पूछना लाजमी हो जाता है कि एक ज्ञान अनुशासन के तौर पर भूगोल का अर्थ क्या है? और क्या ज्ञान अनुशासन की समझ भी वक्त के साथ बदलती रहती है? क्या एक ज्ञान अनुशासन के भीतर विषय के फलसफे के बारे में एक से ज्यादा दृष्टिकोण हो सकते हैं? और जब नए दृष्टिकोण बनें तो स्कूली विषयों और पाठ्यपुस्तकों में उनकी जगह कैसे बने? इस ज्ञान को बच्चों तक ऐसी भाषा और तरीके से कैसे पहुंचाया जाए कि वह नए तरीके से सोचें भी और इस ज्ञान को बनाने, उससे जूझने, सवाल खड़े करने और जवाब ढूंढने में उनकी अपनी भूमिका हो?

यमुना सनी द्वारा लिखित और एकलव्य द्वारा वर्ष 2014 में प्रकाशित ''*स्प्राउटः अ सोशल जियोग्राफी ऑफ राजस्थान*'' एक अनूठी किताब है जो इन सवालों के जवाब देती है और इस दिशा में बढ़ने की एक कामयाब कोशिश करती है। बरसों की मेहनत, अध्यापन के अनुभव और विद्यार्थियों के सहयोग से तैयार यह किताब भौगोलिक ज्ञान की नई व्याख्याओं में से एक व्याख्या- सामाजिक भूगोल के जरिये 'सामजिक' और 'स्थानिक' (spatial) के अंतर्संबंधों को समझने और दर्शाने की सफल कोशिश करती है। भूगोल की इस भारी-भरकम पुनर्व्याख्या को यह किताब सरल शब्दों में समझाती है, 'भूगोल लोगों के बारे में है। वह केवल पहाड़ों, नदियों और सीमाओं के बारे में नहीं है... इंसान अलग-अलग तरह की सामजिक जगहों (स्पेस) जैसे शहर, कस्बे, खेतीहर गांव, जंगल, मछुआरा बस्ती में रहते हैं... इसलिए जगहों के पास सुनाने को अलग-अलग कहानियां हैं... और जब हम समाज में हुए ऐतिहासिक बदलावों की बात करते हैं तो ऐसा नहीं कि वे भूगोल से परे थीं... इन विभिन्न जगहों और समाजों का आपस में संबंध है। स्थान और समय के संदर्भ में इन रिश्तों को समझना सामाजिक भूगोल का महत्वपूर्ण केंद्र बिंदु है' (पृष्ठ 5) और इस काम को अंजाम देने के लिए इस पुस्तक में नई तरह के नक्शों का इस्तेमाल किया गया है जो परम्परागत मानचित्रों के मापन और गणित का इस्तेमाल करने के साथ-साथ हाथ से बने चित्रों के जरिये अलग मूर्त श्रेणियों का प्रतिनिधित्व करते हैं।

नौ अध्यायों में लिखी इस किताब का पहला अध्याय राजस्थान की कल्पना करता है। चित्रों, बातचीत, अवधारणाओं के द्वारा पुराने वक्त के राजस्थान और उसमें क्या बदलाव हुए, बखूबी उभारे गए हैं। किसी

स्प्राउटः अ सोशल जियोग्राफी ऑफ राजस्थान
(अंकुरः राजस्थान का सामाजिक भूगोल)
लेखिकाः यमुना सनी
प्रकाशकः एकलव्य, ई-10, शंकर नगर,
शिवाजी नगर, भोपाल-462016 मध्य प्रदेश
मूल्यः 255 रुपये, **पृष्ठ**-147

समय राजस्थान में हाथियों का होना क्या बताता है, अरावली पर्वत की ऊंचाई घट कैसे गई, जैसे सवाल सोचने पर मजबूर करते हैं।

दूसरा अध्याय राजस्थान के रेगिस्तान को शुष्कता, रेत के टीले, बंजर भूमि और चारागाह जैसी परंपरागत भौगोलिक अवधारणाओं को गतिशीलता के भूगोल, गांवों में तरह-तरह की चारागाह और उनमें आये परिवर्तनों, जमीन के जातिगत स्वामित्व के संदर्भ में समझाने की कोशिश करता है। इस प्रक्रिया में पाठक एक ओर निजी जमीन पर चराई की अनुमति के सामुदायिक नियम के बारे में जानते हैं तो दूसरी ओर पशु-पालन के तरीकों में आए बदलावों और नए समुदायों के इस व्यापार और पशु-पालन में आने की कहानी बयान होती है। पाठक जानते हैं कि किसी समूह का एक जगह छोड़ दूसरी जगह स्थानांतरित होना भी एक ऐतिहासिक-भौगोलिक प्रक्रिया है। समाज का कौनसा तबका स्थानांतरण के लिए किन संसाधनों का इस्तेमाल करता है और किस तरह परिवहन के नए साधनों का इस्तेमाल संसाधनों के पूर्व-स्वामित्व पर निर्भर है, एक ऐसा प्रश्न है, जिसकी गूंज राजस्थान के संदर्भ से निकलकर दिल्ली की मेट्रो और पश्चिमी देशों में पलायन तक सुनाई देती है। यह अध्याय बताता है कि किस तरह चमड़े और नमक उद्योग एक साथ भूगोल (बबूल के पेड़ की बहुतायत), जातिगत काम, व्यापार और बाजार की व्यवस्थाओं और उनकी आपसी अंतःक्रिया के जरिये पनपे हैं।

तीसरा अध्याय मानचित्र और तालिकाओं की तुलना के द्वारा तापमान और आर्द्रता पर अपना ध्यान केंद्रित करता है। आम तौर पर किताबों, नीतियों, लोकप्रिय फिल्मों और चर्चा में आदिवासी समाज या तो एक ऐसे आदिम समूह के रूप में दर्शाया जाता है जो समय-काल में कहीं रुक गया है या फिर संग्रहालयी उपागम (museumisation paradigm) के तहत उनकी संस्कृति को दर्शाया जाता है। इस वर्चस्वशाली प्रतिनिधित्व के बरक्स चौथा अध्याय विभिन्न ऐतिहासिक और समसामयिक संदर्भों में आदिवासी समाज पर चर्चा करता है। एक ओर यह अध्याय भोजन-उत्पादन से लेकर राज्य-निर्माण के संदर्भों में आदिवासी समुदायों और उनके जीवन में आये बदलावों की बात करता है। तो दूसरी तरफ, भौगोलिक विस्थापन, खनन, संरक्षण, विकास बनाम विस्थापन के सवाल बातचीत के घेरे में आते हैं।

आम तौर पर भूगोल में शुष्कता और पानी की उपलब्धता की चर्चा मानव जीवन की अनुपस्थिति और प्रकृति-मानव अंतःक्रिया के बिना होती है। ऐसा लगता है, न तो लोगों ने अपनी समझदारी का इस्तेमाल कर अपने भूगोल के बारे में कोई ज्ञान पैदा किया है और न ही उनका सामाजिक संरचनाओं से कोई वास्ता है। पांचवा अध्याय इन मान्यताओं को कड़ी चुनौती देता है। वह जहां सूखे, अकाल, पानी तक पहुंच और जल-संग्रहण को लेकर राजस्थान में विकसित विभिन्न तरीकों (कुई, कुण्ड, बावड़ी, तालाब) से पाठकों को परिचित कराता है, वहीं पानी और सामाजिक संरचना के रिश्ते को जाति से लेकर वर्ल्ड बैंक तक की योजनाओं के संदर्भ में ढूंढता है।

अगर छठा अध्याय महलों, अदालतों और लोगों, उनके भूगोल, इतिहास और वर्तमान सत्ता और जीवन की चर्चा मांगणियार और बहरूपियों के संदर्भ में करता है तो सातवां अध्याय मीराबाई को केंद्र बिंदु बनाकर, राज्य-निर्माण, सत्ता/ताकत, जाति, जेंडर, इतिहास लेखन, गीत-संस्कृति, प्रतिरोध और कल्पना का ऐसा ताना-बाना बुनता है कि इतिहास और भूगोल की रस्सी मानो एक साथ बन और गुथ रही हों।

आठवें अध्याय में व्यापार, व्यापारी और शहरों की कहानी व्यापार मार्गों, खेती, सिंचाई, बनियों की बदलती भूमिका और भूगोल, आधुनिक राज्य के उदय, औद्योगिक विकास और स्लम के पड़ावों से गुजरती दिखाई पड़ती है। आखिरी

अध्याय भाषा, लोकसाहित्य और खान-पान के जरिये समानता तलाशते हुए, उन परंपरागत परिपाटियों और समुदायों की ओर लौटता है जो राजस्थान में मरुस्थलीकरण के बढ़ते खतरे के खिलाफ कारगर हो सकते हैं। एक ऐसी किताब जो इतिहास, वर्तमान, सामजिक संरचना, विचार, सत्ता और भूगोल को एक साथ पिरोती हो, वह किस तरह खत्म होगी? स्त्री-पुरुष अनुपात, सती, बाल-विवाह और बंधुआ मजदूरी के विवरण जाति, जेंडर और गरीबी के भूगोल पर चर्चा का सबब बनते हैं।

इस किताब को पढ़कर आप कुछ देर चुपचाप बैठ जाते हैं। यह चुप्पी इस किताब ने जिन चारदीवारियों को तोड़ दिया है, इसके अहसास से पैदा होती है। स्कूल और विश्वविद्यालय में बरसों समाज-विज्ञान पढ़ाने के बाद भी ऐसी किताब से पाला नहीं पड़ा था। इस किताब को पढ़कर आप न केवल क्षेत्रीय भूगोल, राजस्थान के बारे में नई समझ बनाते हैं बल्कि ऐसा लगता है कि समाज-विज्ञान की एक अंतरानुशासनिक (interdisciplinary) समझ विकसित हो गई हो। सेवापूर्व और सेवारत शिक्षण-प्रशिक्षण कार्यक्रमों में भूगोल और समाज-विज्ञान पढ़ने के लिए जिन संसाधनों की चर्चा की जाती है, वे सब यहां इस्तेमाल किए गए हैं। इसलिए स्कूलों से लेकर कालेजों एवं विश्वविद्यालयों के शिक्षा विभागों, भूगोल और समाज-विज्ञान विभागों के लिए यह एक बेशकीमती किताब है।

मेरे दस साला बेटे ने जब यह किताब उठाई तो वह इसमें बच्चों के चित्रों, बातचीत, नए तरह के मानचित्र देखकर बेहद आकर्षित हुआ। उसके और अपने अनुभव के बाद किताब में एक कमी नजर आती है। लगभग पूरी किताब में गरिष्ठ अवधारणाएं सरल भाषा में अपनी उपस्थिति दर्ज करती हैं। लेकिन कुछ जगह कठिन अवधारणाओं जैसे सामजिक बनावट (सोशल फार्मेशन), सामजिक बंधन (सोशल टाइज) का इस्तेमाल पढ़ने की गति को अवरुद्ध करते हैं। एक वैकल्पिक परिप्रेक्ष्य और व्याख्या देने के प्रयासों में कई जगह वर्चस्वशाली बोध और दलीलों को बिलकुल दरकिनार कर दिया गया है। अपना परिप्रेक्ष्य बनाने के लिए पाठक- बच्चे और बड़े उनसे उलझें यह जरूरी है। लेकिन यह एक ऐसा काम है जो एक किताब अकेले नहीं कर सकती। इस किताब ने नई अंतर्दृष्टि देने का काम किया है और अगर आप चाहें कि बाकी राज्यों पर भी ऐसी किताबें बनें, तो यह सपने बुनें और उनको जमीन पर लाने का रास्ता इस किताब ने हमें दिखा दिया है। ◆

लेखक परिचयः '19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से नागरिकशास्त्र की पाठ्यचर्या और नागरिक का विचार' पर शोध प्रबन्ध, 10 वर्ष तक विद्यालय में शिक्षण कार्य तथा एससीईआरटी, दिल्ली एवं एनसीईआरटी के साथ पाठ्यपुस्तक निर्माण में भागीदारी। आजकल अंबेडकर विश्वविद्यालय, दिल्ली में अध्यापन कर रहे हैं।